जैनधर्म में स्त्रियों के अधिकार

पं. परमेष्ठीदास जैन

जन धर्म की सबसे बड़ी उदारता यह है कि पुरुषों की ही भांति स्त्रियों को भी तमाम धार्मिक अधिकार दिये गये हैं। जिस प्रकार पुरुष पूजा प्रक्षाल कर सकता है उसी प्रकार स्त्रियां भी कर सकती हैं। यदि पुरुष श्रावक के उच्च व्रतों का पालन कर सकता है तो स्त्रियां भी उच्च श्राविका हो सकती हैं। यदि पुरुष ऊंचे से ऊंचे धर्म ग्रन्थों के पाठी हो सकते हैं तो स्त्रियों को भी यही अधिकार है। यदि पुरुष मुनि हो सकता है तो स्त्रियां भी आर्यिका होकर पंच महाव्रत धारण कर सकती हैं।

धार्मिक अधिकारों की भांति सामाजिक अधिकार भी स्त्रियों के लिये समान ही हैं। यह बात दूसरी है कि वर्तमान में वैदिक धर्म आदि के प्रभाव से जैन समाज अपने कर्तव्यों को और धर्म की आज्ञाओं को भूल गया है। हिन्दू शास्त्रानुसार सम्पत्ति का अधिकारी पुत्र तो होता है किन्तु पुत्रियां उसकी अधिकारिणी नहीं मानी जाती हैं।

पुत्रियां भी पिता की सम्पत्ति की भागीदार

इस संबंध में श्री भगवज्जिनसेनाचार्य ने अपने आदिपुराण (पर्व ३८) में स्पष्ट लिखा है कि—

पुत्र्यश्च संविभागार्हाः समं पुत्रैः समांशकैः ॥१५४॥

अर्थात् पुत्रों की भांति पुत्रियां भी सम्पत्ति की बराबर-बराबर भाग की अधिकारिणी हैं।

इस प्रकार जैन कानून के अनुसार स्त्रियों को, विधवाओं को या कन्याओं को पुरुष के समान ही सब प्रकार के अधिकार प्राप्त हैं।

(विशेष जानकारी के लिये विद्यावारिधि, जैनदर्शन दिवाकर बेरिस्टर चम्पतराय जैन कृत (जैन लॉ) नामक ग्रन्थ देखना चाहिये)।

जैन शास्त्रों में स्त्री-सम्मान के भी अनेक उल्लेख पाये जाते हैं। आज कल मूढ़ जन स्त्रियों को पैर की जूती या दासी समझते हैं, तब जैन राजा राजसभा में अपनी रानियों का उठकर सम्मान करते थे और अपना अर्धासन उन्हें बैठने को देते थे। भगवान महावीर की माता महारानी प्रियकारिणी[1] जब अपने स्वप्नों का फल पूछने महाराजा सिद्धार्थ के पास गई तब महाराजा ने उठकर अपनी धर्मपत्नी को आधा आसन दिया, महारानी ने वहां बैठकर अपने स्वप्नों का वर्णन किया। यथा—

(संप्राप्तार्द्धासना स्वप्नान् यथाक्रममुदाहरत्) ॥

—उत्तरपुराण

धर्मशास्त्र पढ़ने की अधिकारिणी

इसी प्रकार महारानियों का राजसभाओं में जाने और वहां पर सम्मान प्राप्त करने के अनेक उदाहरण जैन शास्त्रों में भरे पडे हैं। जबकि वैदिक ग्रन्थ स्त्रियों को धर्मग्रन्थों के अध्ययन करने का निषेध करते हुए लिखते हैं कि—

(स्त्री-शूद्रौ नाधीयाताम्) तब जैन ग्रंथ स्त्रियों को ग्यारह अंग शास्त्रों के पठन पाठन करने का अधिकार देते हैं। यथा—

द्वादशांगधरो जातः क्षिप्रं मेघेश्वरो गणीः
एकादशांगभृज्जाताऽऽर्यिकापि सुलोचना ॥५२॥

—हरिवंशपुराण सर्ग–१२१

अर्थात्—जयकुमार भगवान का द्वादशांगधारी गणधर हुआ और सुलोचना ग्यारह अंग की धारक आर्यिका हुई।

इसी प्रकार स्त्रियां सिद्धान्त ग्रन्थों के अध्ययन के साथ ही जिन प्रतिमा की पूजा प्रक्षाल भी किया करती थी। अंजना सुंदरी ने

१. श्वेताम्बराम्नायानुसार त्रिशलादेवी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी सखी वसन्तमाला के साथ वन में रहते हुए गुफा में विराजमान जिनमूर्ति का पूजन प्रक्षाल किया था। मदनवेगा ने वसुदेव के साथ सिद्धकूट चैत्यालय में जिन पूजा की थी। मैनासुन्दरी प्रतिदिन प्रतिमा की प्रक्षाल करती थी और अपने पति श्रीपाल राजा को गंधोदक लगाती थी। इसी प्रकार स्त्रियों के द्वारा पूजा प्रक्षाल किये जाने के अनेक उदाहरण पाये जाते हैं।

पूजा-प्रक्षाल की अधिकारिणी

हर्ष का विषय है कि आज भी जैन समाज में स्त्रियां भगवान का प्रक्षाल पूजन करती हैं। कहीं कहीं रूढ़िप्रिय लोग उन्हें इस धर्म-कार्य से रोकते भी हैं और उनकी यदा-तदा आलोचना भी करते हैं। उन्हें यह सोचना चाहिये कि जो आर्यिका होने का अधिकार रखती है वह पूजा प्रक्षाल न कर सके यह कैसी विचित्र बात है ? पूजा प्रक्षाल तो आरंभ कार्य है अतः वह कर्म-बंध का निमित्त है। जिससे संसार (स्वर्ग आदि) में ही चक्कर लगाना पड़ता है जबकि आर्यिका होना संवर और निर्जरा का कारण है, जिससे क्रमशः मोक्ष की प्राप्ति होती है।

अब विचार कीजिये कि एक स्त्री मोक्ष के कारणभूत संवर और निर्जरा करने वाले कार्य तो कर सकती है किन्तु संसार के कारणभूत बंधकर्ता पूजन प्रक्षाल आदि कार्य नहीं कर सकती है। यह कैसे स्वीकार किया जाय ?

जैन धर्म सदा से उदार रहा है, उसे स्त्री-पुरुष या ब्राह्मण-शूद्र का लिंग-भेद या वर्ण-भेद जनित कोई पक्षपात नहीं है। हां, कुछ ऐसे दुराग्रही व्यक्ति भी हो गये हैं जिन्होंने ऐसे पक्षपाती कथन करके जैन धर्म को कलंकित किया है। इसी से खेदखिन्न होकर आचार्य-कल्प पंडितप्रवर टोडरमलजी ने लिखा था—

(बहुरि केई पापी पुरुषां अपना कल्पित कथन किया है। अर तिनको जिन वचन ठहराये हैं। तिनकों जैन मत का शास्त्र जाति प्रमाण न करना। तहां भी प्रमाणादिक तें परीक्षा करि विरुद्ध अर्थ को मिथ्या जानना।)

तात्पर्य यह है कि जिन ग्रन्थों में जैन धर्म की उदारता के विरुद्ध कथन हैं, उन्हें जैन ग्रन्थ कहे जाने पर भी मिथ्या मानना चाहिये। कारण कि कितने ही पक्षपाती लोग अन्य संस्कृतियों से प्रभावित होकर स्त्रियों के अधिकारों को तथा जैन धर्म की उदारता को कुचलते हुए भी अपने को निष्पक्ष मानकर ग्रन्थकार बन बैठे हैं। जहां शूद्र कन्यायें भी जिनपूजा और प्रतिमा प्रक्षाल कर सकती हैं (देखो गौतमचरित्र तीसरा अधिकार), वहां स्त्रियों को पूजा प्रक्षाल का अनधिकारी बताना घोर अज्ञान है। स्त्रियां पूजा-प्रक्षाल ही नहीं करती थी, किन्तु दान भी देती थीं। यथा—

श्री जिनेन्द्र पदाभोजसपर्यायां सुमानसा ।
शचीव सा तदा जाता जैन धर्मपरायणा ।।८६।।
ज्ञानधताय कांताय शुद्धचारित्रधारिणे ।
मुनीन्द्राय शुभाहारं ददौ पापविनाशनम् ।।८७।।

—गौतमचरित्र, तीसरा अधिकार

अर्थात्-स्थंडिला नाम की ब्राह्मणी जिन भगवान की पूजा में अपना चित्त लगाती थी और इन्द्राणी के समान जैन धर्म में तत्पर हो गई थी। उस समय वह ब्राह्मणी सम्यग्ज्ञानी शुद्ध चारित्र-धारी उत्तम मुनियों को पापनाशक शुभ आहार देती थी।

इसी प्रकार जैन शास्त्रों में स्त्रियों की धार्मिक स्वतन्त्रता के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

जहां तुलसीदासजी ने लिख दिया है—

ढोर गंवार शूद्र अरु नारी ।
ये सब ताड़न के अधिकारी ।।

भ० ऋषभदेव ने पुत्रियों को पढ़ाया

वहां जैन धर्म ने स्त्रियों की प्रतिष्ठा करना बताया है, सम्मान करना सिखाया है और उन्हें सभी समान अधिकार दिये हैं। जहां वैदिक ग्रन्थों में स्त्रियों को वेद पढ़ने की आज्ञा नहीं है (स्त्री-शूद्रौ नाधीयाताम्) वहीं जैनियों के प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ ने स्वयं अपनी ब्राह्मी और सुन्दरी नामक पुत्रियों को पढ़ाया था। उन्हें स्त्री जाति के प्रति बहुत, सम्मान था। पुत्रियों को पढ़ने के लिये उन्होंने कहा था—

इदं वपुर्वयश्चेदमिदं शीलमनीदृशं ।
विद्यया चेद्विभूष्येत सफलं जन्म वानिदं ।९७।
विद्यावान पुरुषो लोके सम्मतिं याति कोविदैः ।
नारी च तद्वती धत्ते स्त्रीसृष्टेरग्रिमं पदं ।९८।
तद्विद्या ग्रहणे यत्नं पुत्रिके कुरुतं युवां ।
तत्संग्रहणकालोऽयं युवयोर्वर्ततेऽधुना ।।१०२।।

—आदिपुराण पर्व १६

अर्थात् पुत्रियों ! यदि तुम्हारा यह शरीर, अवस्था और अनुपम शील विद्या से विभूषित किया जावे तो तुम दोनों का जन्म सफल हो सकता है। संसार में विद्यावान पुरुष विद्वानों के द्वारा मान्य होता है। अगर नारी पढ़ी लिखी-विद्यावती हो तो वह स्त्रियों में प्रधान गिनी जाती है। इसलिये पुत्रियो ! तुम भी विद्या ग्रहण करने का प्रयत्न करो। तुम दोनों को विद्या ग्रहण करने का यही समय है।

इस प्रकार स्त्री-शिक्षा के प्रति सद्भाव रखने वाले भगवान आदिनाथ ने विधि पूर्वक स्वयं ही पुत्रियों को पढ़ाना प्रारंभ किया।

नारी-निन्दा

खेद है कि उन्हीं के अनुयायी कहे जाने वाले कुछ लोग स्त्रियों को विद्याध्ययन, पूजा, प्रक्षाल आदि का अनधिकारी बताकर उन्हें प्रक्षाल पूजा करने से आज भी रोकते हैं और कहीं कहीं स्त्रियों को पढ़ाना अभी भी अनुचित माना जाता है। पहले स्त्रियों को मूर्ख रखकर स्वार्थी पुरुषों नें उनके साथ पशु तुल्य व्यवहार करना प्रारंभ कर दिया और मनमाने ग्रंथ बनाकर उनकी भरपेट निन्दा कर डाली। एक स्थान पर नारी निन्दा करते हुये एक विद्वान ने लिखा है—

(शेष पृष्ठ १२८ पर)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org